चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र

मूल्य ४।।

1949

Chandamama, November, '49

Photo by B. Ranganadham

घर घर में दीवाली !

चन्दामामा

विषय सूची

लोमड़ी और बिलाव ६
दीवाली ... ८
तमाल वृक्ष का जन्म ... ९
बगुला और बन्दर ... १३
वर्धमान की विचित्र यात्रा .. १५
काजी का फैसला ... २१
जादू की कठोलिन ... २५
मेरी माँ ... २९
सास और पतोहू की कहानी . ३३
सीता-फल और राम-फल ... ३७
ब्रह्म-राक्षस ... ४१
चन्दामामा ... ४५
बच्चों की देख-भाल ... ४६
भानुमती की पिटारी ... ४८

इनके अलावा, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रँगीले चित्र, और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं।

चन्दामामा कार्यालय
पोस्ट बाक्स नं० १६८६
मद्रास-१

लेखकों के लिए

एक सूचना

★

चन्दामामा में बच्चों की कहानियाँ, लेख, कवितायें वगैरह प्रकाशित होती हैं। सभी रचनायें बच्चों के लायक सरल भाषा में होनी चाहिए। सुन्दर और मौलिक कहानियों को प्रधानता दी जायगी। अगर कोई अपनी अमुद्रित रचनायें वापस मँगाना चाहें तो उन्हें अपने लेख के साथ पूरा पता लिखा हुआ लिफ़ाफ़ा स्टांप लगा कर भेजना होगा। नहीं तो किसी हालत में लेख लौटाए नहीं जा सकते। पत्र-व्यवहार करने से कोई लाभ न होगा। अनावश्यक पत्र-व्यवहार करने से समय की क्षति होती है और हमारे आवश्यक कार्य-कलाप में बाधा पहुँचती है। कुछ लोग रचनायें भेज कर तुरंत पत्रों पर पत्र लिखने लगते हैं। उतावली करने से कोई फ़ायदा नहीं। आशा है, हमारे लेखक इन बातों को ध्यान में रख कर हमारी सहायता करेंगे।

★

—: कार्यालय :—
३७, आचारप्पन स्ट्रीट, मद्रास—१.

वर्ष १ | संचालक : चक्रपाणी | १- नवम्बर
अङ्क ३ | | १९४९

बच्चो ! फिर एक बार दीवाली आई और चली गई। फिर एक बार हमने घर-घर दिए जलाए, रंग-बिरंगे कपडे पहने और उछल-कूद कर खुशियाँ मनाईं। इसी तरह सैकडों और हजारों बरसों से हर साल दीवाली आती और चली जाती है। तुम तो जानते ही होगे कि हम लोग दीवाली क्यों मनाते हैं ? इसी दिन भगवान कृष्ण ने नरकासुर का वध किया था। नरकासुर के मरते ही चौदहों लोक में आनन्द छा गया। लोग घर-घर दिए जला कर खुशियाँ मनाने लगे। दीवाली इसी की यादगार है।

लेकिन नरकासुर मर कर भी बार बार जी उठता है। क्योंकि वह नरक कहीं बाहर तो है नहीं; हमारे अँधेरे हृदय में ही उसका राज्य है। इसलिए जब हृदय प्रकाश से भर जायगा तो नरकासुर आप ही आप मर जाएगा। नरकासुर का वध करके ही तुम सुखी हो सकोगे। बोलो, तुम भी नरकासुर-वध करोगे न ?

लोमड़ी और बिलाव

साँझ हो रही थी, जब एक लोमड़ी
अंगूरों के मचान निकट थी खड़ी।
उस मचान पर लटके काले अंगूर;
पर उन्हें न छू सकती थी वह मजबूर।
उछली वह ऊपर की ओर बार बार।
किन्तु गई वह मेहनत सारी बेकार।

उल्टे उसके पैरों में आई चोट;
लँगड़ाती चली वहाँ से तुरंत लौट।
मिला अचानक उसको राह में बिलाव,
बोला वह-'मौसी, क्या हाल? म्याव! म्याव!
क्यों लँगड़ाती हो? क्या गिर पड़ी, कहीं?
या निर्बल पैरों में जोर अब नहीं?'

कहा लोमड़ी ने-'मैं क्या कहूँ बिलाव!
न मैं कहीं गिर पड़ी, न निर्बल हैं पाँव।
अंगूरों के मचान निकट थी खड़ी;
पीछे से कुछ आहट कान में पड़ी।
जब तक मुड़ देखूँ इक मोटा चूहा
मुझे काट कर मचान पर जा बैठा।'

'अरे! कहाँ छिपा दुष्ट? दिखा दो अगर
मजा चखा दूँ उस का गर्व चूर कर'

"बैरागी"

यों बोला वह बिलाव: बस, अब क्या था ?
चली लोमडी उसको साथ ले वहाँ—
काले अंगूर लटक रहे थे जहाँ !
और एक गुच्छे को दिखा कर कहा—
'देखो, वह पत्तों में छिप कर बैठा
वही दुष्ट, जिसने था मुझको काटा।'

इक छलांग में बिलाव ऊपर चढ कर
रौंदने लगा मचान को इधर उधर;
नीचे काले अंगूर टपकने लगे;
वाह! लोमडी के तो भाग अब जगे!
लगी निगलने अँगूर वह खुशी-खुशी,
ऊपर करता बिलाव धमा-चौकडी।

आखिर थक कर बिलाव पूछने लगा—
'अजी! किधर है चूहा, किधर वह भगा?'
'खोजो न वहीं होगा, जायगा कहाँ?'
खूब लोमडी ने फल ठूँसते कहा।
जी भर खा कर अपनी राह चल दिया;
वह बेचारा बिलाव यों छला गया।

इसी तरह धूर्तों के हाथों में फँस कर
गर्वीले जन बनते बेवकूफ सत्वर।

दीवाली

*

आई लो, फिर से दीवाली,
छाई लो, घर घर उजियाली।
भाग रही अँधियारी काली;
जाग रही आशा की लाली।

पहने कपड़े रंग-बिरंगे,
खेलें बहनें भरी उमंगें।
भैया दौड़ा शोर मचाता,
मुन्ना भी तालियाँ बजाता।

छूट रहे सब ओर पटाखे,
परदे फटते हैं कानों के।
आतिशबाज़ी की कौंधों में
चकाचौंध होती हैं आँखें।

आओ, प्यारे बच्चो! आओ,
स्वतन्त्रता का दीप जलाओ!
मरा दासता का नरकासुर;
उछलो, कूदो, खुशी मनाओ!

किसी समय एक देश में एक खूँखार राक्षसी रहती थी। वह सारे भू-मंडल में घूमती फिरती थी और क्रूरता से आदमियों और जानवरों को मार कर खा जाती थी। उस राक्षसी का नाम सुनते ही लोग काँप उठते थे। उस के डर से लोगों ने शहर बाजारों में घूमना फिरना भी छोड़ दिया। हर दम दरवाजा लगाए घरों में बैठे रहते थे। लेकिन आखिर कोई कितने दिन इस तरह रहता? दाना-पानी के बिना तो कोई जी नहीं सकता था। अगर लोग बाजार न जाते, खेतों में काम न करते तो जीविका कैसे चलती! लेकिन बाहर जाने से जान का खतरा था। इस तरह लोगों की हालत साँप-छछुंदर सी हो गई। वे घरों में बन्द भूख-प्यास से तड़प-तड़प कर मरने लगे।

लोगों को इस तरह तकलीफ़ उठाते देख कर सूर्य भगवान को बड़ी दया आई। वे रोज सबेरे जब अपने सात घोड़ों वाले रथ पर बैठ कर पूरब से निकलते तो उन्हें पृथ्वी पर हाहाकार के शब्द सुनाई पड़ते और उनके मन में बड़ा कष्ट होता। आखिर उन्होंने तै कर लिया कि किसी-न-किसी उपाय से इन बेचारों का कष्ट दूर करना चाहिए।

दूसरे दिन सूरज महाराज ने अपनी चमचमाती हुई तलवार बाहर निकाली और उसे अपनी कमर में लटका लिया। पीठ पर तरकस बाँध लिया और एक हाथ में धनुष ले लिया। फिर उन्होंने अपने सात घोड़ों वाले रथ पर बैठते हुए सोचा—"चाहे जो कुछ भी हो, आज मैं जरूर उस राक्षसी को

रामशरण शुक्ल

मार डालूँगा। अब मैं अधिक दिन तक लोगों के कष्ट नहीं देख सकता।"

महाराज सीधे धरती पर उतरे और राक्षसी को खोज कर उसके सामने गए। उन्होंने उसे ललकारा और धनुष पर एक ऐसा तीर चढ़ा कर मारा कि वह हाय! हाय! करने लगी। लेकिन वह भी कोई मामूली राक्षसी तो थी नहीं। बस, मुँह बाए महाराज को निगलने दौड़ी। दोनों में बड़ी देर तक लड़ाई हुई। राक्षसी के पास कोई हथियार नहीं था। तो भी उसने अपने पैने नखों से सूरज महाराज को घायल कर दिया।

आखिर बड़ी देर के बाद सूरज महाराज ने गुस्से में आकर अपनी तलवार निकाली और एक ऐसा हाथ जमाया कि राक्षसी का सिर धड़ से अलग ही कर धरती पर आ गिरा और लुढ़कने लगा। बेचारे महाराज इस युद्ध में बहुत थक गए थे। लेकिन उन्हें खुशी इस बात की थी कि लोगों के सिर से एक बला टल गई।

अब थके-माँदे सूरज महाराज ने सोचा—"चलो, थोड़ी देर इस नदी के किनारे टहल कर अपनी थकान मिटा लूँ।" वहीं पास ही एक नदी थी। सूरज महाराज उसके किनारे-किनारे टहलने लगे।

थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक अत्यन्त सुन्दरी कन्या दिखाई दी। "अहा! यह लड़की देखने में कितनी सुन्दर है! अगर मैं इसे अपनी रानी बना लूँ तो बड़ा अच्छा हो!" उन्होंने मन-ही-मन सोचा। वे उस की ओर एकटक देखते हुए वहीं खड़े रह गए। फिर किसी तरह अपने आप को सम्हाल कर वे उस लड़की के पास गए और कहने लगे—"सुन्दरी! शायद तुम मुझे

नहीं जानतीं। मैं ही सूरज हूँ। मैं ही सारे संसार को रोशनी देता हूँ। आसमान में मेरा ही राज है। वहीं मेरा सोने का किला है, जिसके फाटकों पर मोतियों की झालरें लटकती हैं। सुन्दर देव-कन्याएँ उन द्वारों की रखवाली करती हैं। मैं अपने सात घोड़ों वाले रथ पर सवार हो कर रोज आसमान में घूमा करता हूँ। क्या तुम भी मेरे साथ मेरे राज में आओगी? मैं तुम्हें अपनी रानी बनाऊँगा। फिर तुम्हें संसार में किसी चीज़ की कमी न रहेगी। बोलो, क्या तुम मेरे साथ चलना पसन्द करोगी?"

वह लड़की बड़ी लजीली थी। तिस पर उसे कभी पराए लोगों से बातचीत करने की आदत न थी। वह अपने घर और अपने माँ-बाप को छोड़ कर एक पल भी नहीं जी सकती थी। उस नदी के किनारे एक छोटी सी कुटिया ही उसका राजमहल थी। जंगल के पशु-पक्षी ही उसकी सहेलियाँ थे। दिन-रात फूल चुन कर हार गूँथना ही उसका काम था। यह सब छोड कर वह सूरज महाराज के साथ कैसे जाती? इस

लिए वह चुपचाप सिर झुकाए खड़ी रही।

सूरज महाराज ने उसे अनेक तरह से समझाया। आखिर वे गिड़-गिड़ाने भी लगे। लेकिन उस लड़की ने कोई जवाब न दिया। उलटे वह दौड़ कर वहाँ से भागने लगी। लेकिन महाराज उसके पीछे दौड़ते हुए बार-बार कहने लगे—"लड़की! तुम भागती क्यों हो? डरो नहीं, मैं तुम्हारा कुछ नहीं बिगाडूँगा। तुम मेरे साथ चलो। मेरी रानी बनो। तुम जो कुछ माँगोगी सो सब ला दूँगा।" लेकिन उस लजीली लड़की ने

उनकी एक न सुनी। वह सिर झुकाए उसी तरह भागती रही। लेकिन सूरज महाराज ने भी उसका पीछा न छोड़ा। वे और भी तेजी से दौड़ कर उसके पास पहुँच गए और हाथ फैला कर उसे पकड़ लेने की कोशिश करने लगे। अब तो उस लड़की के होश उड़ गए और उसने चिल्ला कर अपने पिता को पुकारा—'बाबूजी! बाबूजी!'

जब उसके पिता वरुण-राज ने बड़ी दूर से उसकी चिल्लाहट सुनी तो उन्होंने समझ लिया कि उनकी कन्या पर कोई संकट आ पड़ा है। मनुष्य रूप में रहने से यही जोखिम है। फिर सुन्दरी कन्या को देखने से तो सबका मन ललचा जाता है। यह सब सोच कर उन्होंने मन-ही-मन एक मन्त्र पढ़ा और पलक मारते-मारते वह लड़की एक तमाल वृक्ष में बदल गई। यह देख कर सूरज महाराज को बड़ा अचरज हुआ। साथ-साथ उन्हें निराशा भी हुई।

"अब पछताने से क्या फ़ायदा? कहाँ मैंने सोचा था कि तुम्हें अपनी रानी बनाऊँ और कहाँ तुम एक पेड़ बन बैठीं! लेकिन अब भी तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम नहीं घटा। बल्कि वह और भी बढ़ गया है। जाओ, मैं तुम्हें एक वर देता हूँ जिससे तुम्हारे पत्ते हमेशा हरे बने रहेंगे। मैं हमेशा तुम्हें अपने शीश पर धारण करूँगा।" सूरज महाराज ने आँखों में आँसू भर कर कहा। उसी दिन से वे अपने शीश पर तमाल के पत्तों से निर्मित मुकुट पहनने लगे।
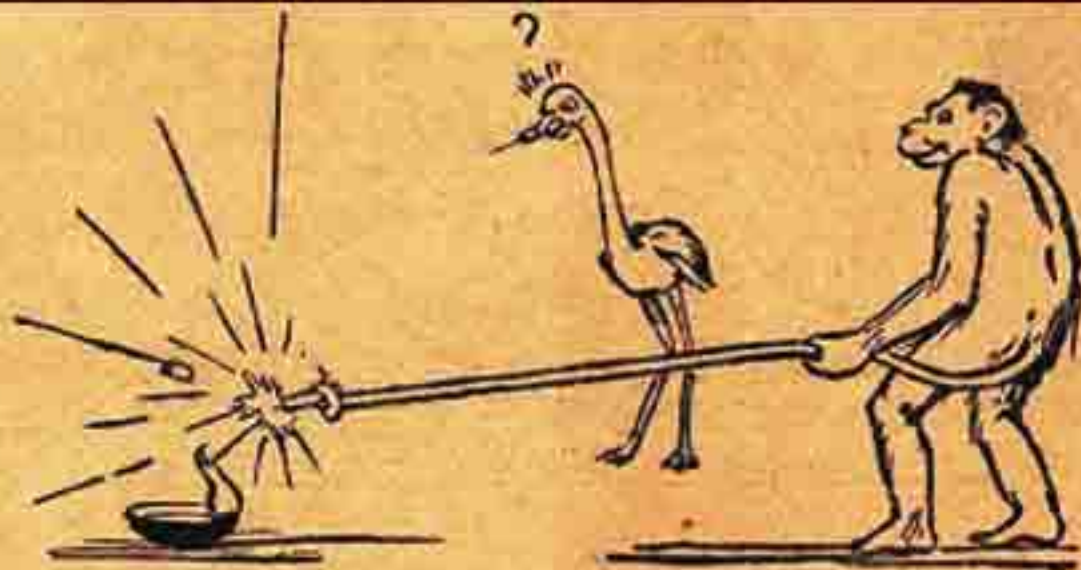
इस बार बन्दर और बगुले में आतिशबाजियाँ जलाने की बाजी लगी। बन्दर ने बड़ी सावधानी से अपनी पूँछ में लपेट कर एक फुलझड़ी जलाई।
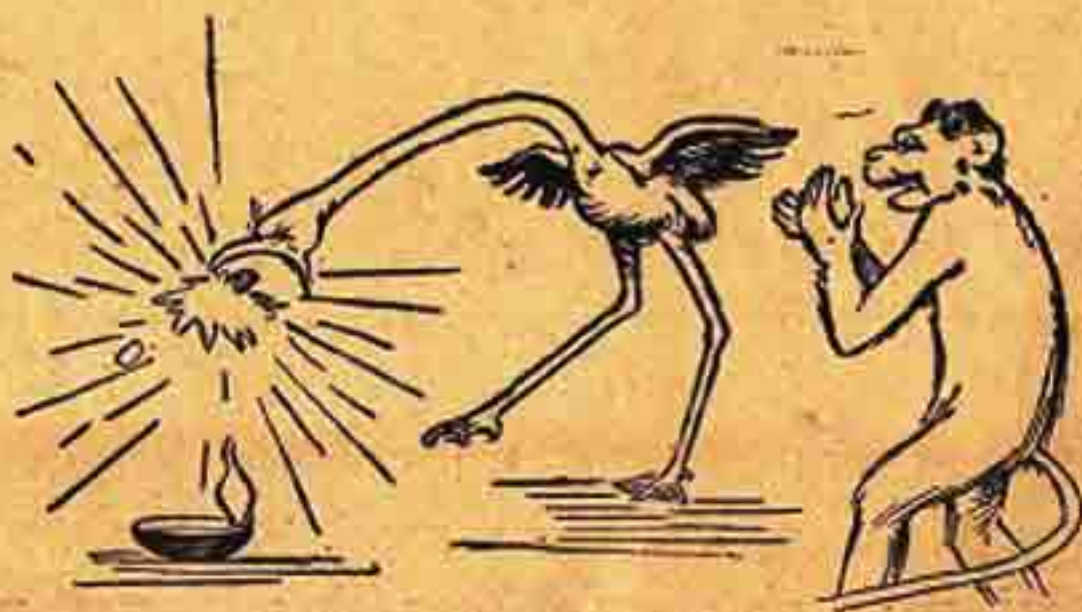
बगुले ने भी अपनी चोंच से पकड़ कर एक फुलझड़ी जलाई। बस, अब क्या था? बेचारे का मुँह झुलस गया और वह दर्द के मारे चीख उठा।

इसके कुछ ही दिन बाद वर्धमान को राजधानी में घूम-फिर कर देखने की इजाज़त मिल गई। 'मानवी-पर्वत' के आने की खबर सुनते ही सब लोग घरों में जा घुसे। पर बहुत से लोग उसे देखने के लिए महलों की छतों पर भी जा चढ़े। उस शहर के बीचों-बीच राजा का महल था, जिसके चारों तरफ़ ऊँची चहर-दीवारी थी। वर्धमान वह दीवार लाँघकर आसानी से अहाते में पहुँचा। पर राज-महल के अन्दर की सजावट, बेल-बूटे और चित्रकारी वगैरह वह ज़मीन पर लेट कर खिड़कियों से ही देख सका।

राजा ने उसकी बड़ी आव-भगत की। वर्धमान को इससे बहुत खुशी हुई। वह सोचने लगा कि उनका एहसान चुकाने का कोई मौका मिले तो बहुत अच्छा हो। थोड़े दिनों में उसे ऐसा मौका भी मिल गया।

बौनों के टापू से थोड़ी ही दूर पर और एक छोटा-सा टापू था। वहाँ के लोग भी देखने में बिलकुल बौनों के जैसे ही थे। वह टापू 'नन्हा-टापू' कहलाता था और वहाँ के निवासी नन्हें। बौनों और नन्हों में न जाने कितने दिनों से लड़ाई चली आती थी। अभी कुछ वर्षों से दोनों के बीच ऊपरी शांति विराज रही थी। लेकिन नन्हों का राजा चुपके-चुपके लड़ाई की तैयारी कर रहा था। वह बौनों के टापू पर चढ़ाई करने के लिए बहुत से जंगी जहाज बनवा रहा था। बौने राजा को अपने गुप्तचरों द्वारा मालूम हो गया कि वे जंगी जहाज अब पूरी तरह

'गलिवर्स ट्रैवेल्स' का स्वेच्छानुवाद

तैयार हो गए हैं और नन्हें उन पर चढ़ कर चढ़ाई करने ही वाले हैं। बस, राजा ने तुरंत वर्धमान को बुलाया और उसकी मदद माँगी। तब वर्धमान ने कहा—"मेरे लिए इससे बढ़ कर खुशी की बात और क्या हो सकती है? लेकिन पहले मुझे कुछ चीजें चाहिए। उन चीजों के मिलते ही मैं कुछ तैयारी कर लूँगा और फिर नन्हों के सब जहाज पकड़ कर आप के हवाले कर दूँगा।" यह सुन कर राजा को बहुत खुशी हुई। उसने हुक्म दिया कि वर्धमान जो-जो चीजें चाहे तुरंत ला दी जाएँ। वर्धमान ने एक बड़ा मोटा रस्सा और लोहे की कुछ मोटी-मोटी छड़ें माँगी। हर बौनों के पास जो रस्से थे वे हमारे सूत के धागे से ज्यादा मोटे न थे। उनकी लोहे की छड़ें हमारी छोटी-छोटी कीलों से बड़ी न थीं।

बेचारे वर्धमान को किसी-न-किसी तरह इन्हीं से काम चलाना पड़ा। उसको जो रस्सियाँ मिलीं उन्हें फिर से तिगुनी बँट कर उसने एक मजबूत रस्सी तैयार कर ली। ऐसी-ऐसी पचास रस्सियाँ बँट लीं। फिर
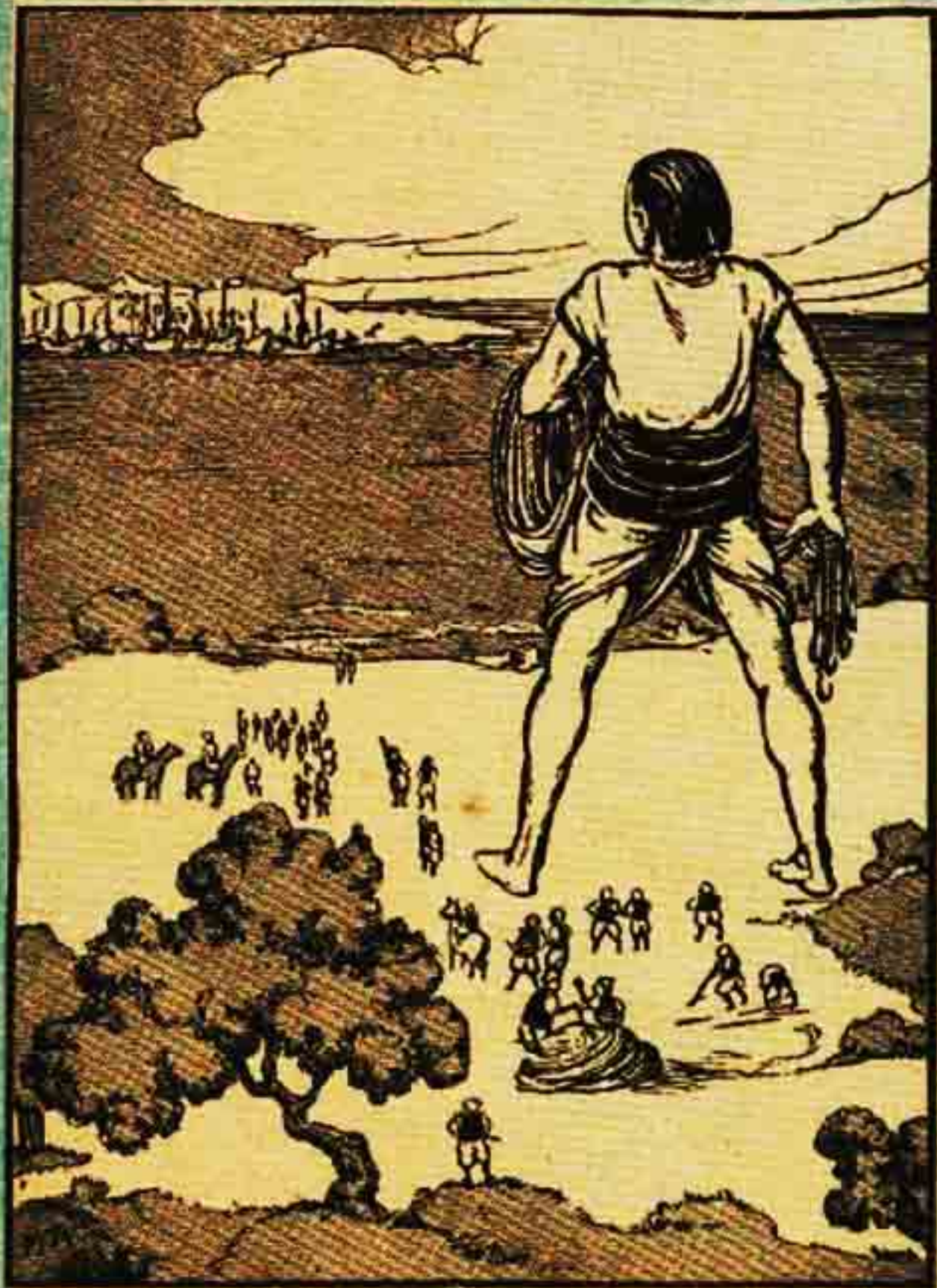
उसने तीन-तीन छड़ों को मिला कर झुका लिया और इस तरह के पचास काँटे तैयार कर लिए। फिर एक-एक रस्सी से एक-एक काँटा बाँधा और उन्हें अपने कंधे पर लटकाए, वह उस ओर चला, जहाँ समुंदर के किनारे नन्हों के जंगी बेड़े लंगर डाले खड़े थे।

बौनों और नन्हों के टापुओं के बीच से एक नहर गई थी जो दोनों टापुओं को अलग करती थी। वह नहर सात आठ फुट से कहीं ज्यादा गहरी न थी। हनुमान को दूर से ही नन्हों के जंगी बेड़े दिखाई दे रहे थे। कुल मिला कर पचास जंगी जहाज और कुछ छोटी-मोटी नावें थीं। वह पानी में उतर कर उनकी ओर बढ़ने लगा।

बौने राजा और उनके सब दरबारी किनारे पर खड़े-खड़े देख रहे थे कि वह अब क्या करने वाला है! जहाजों पर के नन्हें लोग अपने-अपने काम में मशगूल थे। उन्हें क्या पता कि उनके सिर पर ही पहाड़ टूट कर गिरने वाला है! उन्हें इस 'मानवी-पर्वत' के बारे में बिलकुल मालूम नहीं था।

किनारे पर के नन्हें लोग उस पर तीरों की बौछार कर रहे थे। उन तीरों के लगने से वर्धमान को और कोई कष्ट तो न था; लेकिन आँखें फूट जाने का डर जरूर था। इसलिए वर्धमान ने एक उपाय किया। आते वक्त उसने जेब में एक चश्मा रख छोड़ा था। अब उसे निकालकर लगा लिया।

लेकिन एक और अड़चन उठ खड़ी हुई। नन्हों के सभी जहाज लंगर डाले खड़े थे। अब इन लंगरों को खोलने के लिए वर्धमान के पास काफी समय न था। इसलिए वर्धमान ने चाकू से उन सब लंगरों के रस्से काट डाले। यह देख कर नन्हें लोग और भी घबरा गए। वे और भी फुर्ती से वर्धमान पर तीर बरसाने लगे। लेकिन वर्धमान ने इसकी कुछ परवाह न की। वह रस्सियाँ पकड़ कर दुश्मन के उन पचासों जहाजों को खींच ले चला।

वर्धमान को मंझधार में थोड़ी दूर तक तैरना पड़ा। लेकिन जल्दी ही उसके पैर थाह में आ गए। वह जल्दी-जल्दी बेड़े की ओर चला। उसके चलने से पानी में जो उथल-पुथल पैदा हुई उसे देख कर नन्हों के भय और आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कुछ लोग तो खड़े-खड़े मुँह बाये देखते रह गए; पर कुछ लोग जान लेकर भाग निकले। अब वर्धमान ने ज्यादा देर न की। झटपट उन जहाजों को अपनी कौटियों से कस कर बाँध लिया और सब रस्सियाँ मिला कर एक गाँठ लगा दी।

किनारे पर पहुँचते ही बौनों ने जोर से नारे लगाए—"बामन महाराज की जय!" "मानवी-पर्वत की जय!" महाराज बड़े

प्रसन्न हुए और उन्होंने वर्धमान को एक लम्बा-चौड़ा खिताब दे डाला।

लेकिन इस तरह राजा का सम्मान-पात्र बनना वर्धमान के हक में अच्छा न हुआ। राजा ने सोचा—जब वर्धमान ने इतना बड़ा काम कर दिखाया तो वह और क्या नहीं कर सकता है? अब उसके लालच का ठिकाना न रहा। उसने वर्धमान को आज्ञा दी—"तुम तुरंत जाकर नन्दों के बचे-खुचे जहाज और नावें पकड़ लाओ। इतना ही नहीं, उनका नामो-निशान भी मिटा दो। तभी हम उस देश पर कब्जा कर सकेंगे और मैं विश्व-विजयी कहला सकूँगा।"

लेकिन वर्धमान ने सोचा—"यह तो बड़ी बेईमानी है। मुझ से यह कभी नहीं हो सकता।" इसलिए उसने राजा को सलाह दी कि नन्दों से सुलह कर लेना ही उचित है। उन्हें और नीचा दिखाना अच्छा नहीं।

नन्दों के दूत सुलह की बातचीत करने आए तो उन्होंने सुना कि वर्धमान उनका

पक्ष ले रहा है और उनके प्रति न्याय करने की कोशिश कर रहा है। तुरंत उन्होंने वर्धमान के दर्शन किए और उसकी वीरता और उदारता की प्रशंसा करके कहा—"आप एक बार जरूर हमारे देश में पधारिए। हमारे राजा साहब आपसे मिलकर बहुत खुश होंगे।" वर्धमान ने जवाब दिया कि उसने भी नन्दों के राजा की बड़ी बड़ाई सुनी है और अपने देश लौट जाने के पहले वह जरूर उनसे मिलने की कोशिश करेगा। उसने इन दूतों से अनुरोध किया कि वे

कृपा करके नन्हें महाराज को उसका सादर नमस्कार कहें।

वर्धमान के अड़ जाने के कारण बौने महाराज को सुलह कर लेनी पड़ी। लेकिन उन्हें वर्धमान पर बड़ा क्रोध आया और अब चुगल-खोरों को राजा के कान भरने का अच्छा मौका मिला।

सैलानी वर्धमान ने नन्हों का देश देखने का निश्चय किया और बौने महाराज से इजाज़त माँगी। राजा ने बड़ी मुश्किल से इजाज़त तो दी, लेकिन गुपचुप वह वर्धमान को मरवाने की तैयारी करने लगा। वर्धमान के कानों में जब इसकी भनक पड़ी तो पहले उसे विश्वास न हुआ। लेकिन पूछ-ताछ से मालूम हो गया कि खबर पक्की है। अब उसने समझ लिया कि देर करने में जान का खतरा है। इसलिए वह रातों-रात भाग कर नन्हों के देश में जा पहुँचा और नन्हें राजा की शरण में चला गया।

वह वहाँ कुछ दिन तक बड़े आराम से रहा। अचानक एक दिन एक भूला-भटका जहाज उस तट पर आ लगा। उसको देखते ही वर्धमान ने स्वदेश लौटने का निश्चय कर लिया।

नन्हों ने अनेक इनाम-अकराम देकर बड़े प्रेम से उसे विदा किया।

चन्द दिनों के बाद वर्धमान को अपने देश की मिट्टी पर पाँव रखने का मौका मिला। सब लोग, खास कर बच्चे उसकी यात्रा की कहानियाँ सुनकर अचरज में पड़ गए। धीरे-धीरे चारों तरफ़ उसकी शोहरत फैल गई।

[समाप्त]

पुराने जमाने में जापानी आइना देखना नहीं जानते थे। इसलिए उनमें से कोई नहीं जानता था कि उसकी सूरत देखने में कैसी लगती है।

उसी जमाने में जापान के एक गाँव में एक किसान रहा करता था। उसे एक दिन राह में चलते-चलते धूल से भरा हुआ आइने का एक टुकड़ा मिला। उसे उठा कर उसने हाथ में लिया और झाड़-पोंछ कर जेब में रख लिया। घर पहुँचने के बाद वह फिर उसे जेब से निकाल कर उलट-पलट कर देख रहा था कि अचानक उसे अपनी शकल दीख गई। लेकिन वह किसान तो जानता नहीं था कि वह सूरत उसी की है।

"कौन है यह जो एक-टक मेरी ओर देख रहा है!" उसे बड़ा अचरज हुआ। आखिर बहुत सोचने-विचारने के बाद उसने तय किया कि यह सूरत और किसी की नहीं, बल्कि उसके पिताजी की है जो उसके बचपन में ही स्वर्ग सिधार गए थे। उसके मन में सन्देह पैदा हुआ—"इतने दिनों के बाद आज यह क्यों मेरी सुध लेने आए हैं? शायद इन्हें मुझ पर गुस्सा हो आया है कि मैं इन्हें भूल गया हूँ। इसी से अपनी याद दिलाने आए हैं।" यह सोच कर वह बहुत पछताया और मन-ही-मन पिता को बार-बार प्रणाम करने लगा।

लेकिन उसे न सूझा कि इस आइने के टुकड़े को वह क्या करे। अगर फेंक देगा तो शायद पिता गुस्सा होंगे। यह सोच कर उसने उसे एक रूमाल में लपेट कर हिफ़ाज़त से एक सन्दूक में बंद कर दिया जिससे उसकी घरवाली उसे न देख सके। वह हर रोज अपनी औरत से छिपा कर दिन में दो-एक बार सन्दूक खोलता और पिता का दर्शन करके फिर बन्द कर देता।

एक दिन उसकी यह हरकत उसकी औरत ने देख ली। वह किसान पहले

रामशरण शुक्ल

कभी उस सन्दूक में ताला न लगाता था। लेकिन अब वह ताला लगाने लगा था। अकेले में सन्दूक खोल कर बार-बार देखने लगा था। इन सब बातों से उसकी औरत के मन में शक पैदा हो गया। वह सोचने लगी कि हो न हो, उसके पति ने उस सन्दूक में जरूर कोई अनूठी चीज छिपा रखी है। इसलिए, वह वैसी ही और एक चाबी कहीं से ले आई और एक दिन, जब उसका पति घर में नहीं था, सन्दूक खोल कर देखी। लेकिन उसमें उस काँच के टुकड़े के सिवा और क्या खाक धरा था! वह भी उस टुकड़े को उलट-पुलट कर देखने लगी तो उसमें एक औरत की शकल दीख पड़ी। बस, उसने समझा कि उसके पति ने किसी पराई औरत की तस्वीर छिपा कर रख छोड़ी है। यह सोचते ही वह गुस्से से तमतमा उठी। अब हर रोज वह आइने में अपनी सूरत देखती और बड़बड़ाने लगती—'कैसी गंदी है यह औरत! इसी काली-कलूटी पर यह महाशय लट्टू हो गए हैं!' इस चिन्ता से उसके मुँह पर झुर्रियाँ पड़ गईं और वह बूढ़ी-सी दीखने लगी। एक दिन उससे रहा न गया। उसका सारा शरीर क्रोध से काँपने लगा। झल्ला कर वह इस ताक में बैठी रही कि कब उसका पति घर आए और कब वह उसे जली-कटी सुना कर अपने मन की जलन बुझाए!

उसका पति दोपहर को घर लौटा। वह घर में पाँव भी न रख पाया था कि उसकी औरत चिल्लाकर बोली—"मैं अभी मैके चली जाती हूँ। तुम उसी कलूटी को लेकर घर में रहो और मौज उड़ाओ।" उसका पति हक्का-बक्का सा सब कुछ सुनता रहा। उसकी समझ में कुछ भी न आया। गिड़गिड़ा कर पूछने लगा—"आखिर बात क्या है! बताओ भी तो!" उसके बहुत कुछ मनाने पर औरत ने आइने का हाल सुना दिया। यह सुन कर उसके अचरज का ठिकाना न रहा।

"क्या कहा! उसमें एक औरत है! तो क्या उसमें मेरे पिताजी नहीं हैं!" उसने घबरा कर पूछा।

"वाह! वाह! यह बहाना तो खूब बनाया—पिताजी! अच्छा हुआ कि दादाजी का नाम न लिया। जरा एक बार देख तो लो कि कौन है इसमें!" यह कह कर उसने आइना लाकर उसके सामने पटक दिया। किसान ने देखा तो उसे फिर अपने पिताजी का चेहरा दिखाई दिया। खुशी से उछल कर बोला—"अरे तुम्हीं देख न लो कि कौन है इसमें! यही तो पिताजी हैं!" अब औरत ने झाँका तो उसे अपना ही चेहरा दिखाई दिया। अब क्या था! गुस्से से आग होकर तुरन्त उठ खड़ी हुई और मैके की ओर चल पड़ी।

उसका पति गिड़गिड़ाता हुआ उसके पीछे-पीछे चला। राह में दोनों की एक काजी से भेंट हो गई। उसने इन दोनों को देखते ही पूछा—"क्या बात है! क्यों आपस में झगड़ रहे हो!" औरत-मर्द दोनों ने अपनी-अपनी बात कह सुनाई और अन्त में कहा कि काजी जो फैसला करेगा दोनों खुशी से मान लेंगे। किसान ने आइने का वह टुकड़ा काजी के हाथ में रख दिया।

अब काजी ने उसको उठा कर देखा तो उसमें उसे एक बूढ़ा झुर्रीदार चेहरा लिए दिखाई दिया। काजी ने पिछले साल एक बूढ़े को फाँसी की सजा सुनाई थी। बस, उसने समझा कि यह उसी बूढ़े का चेहरा है। उसने उन दोनों से कहा—"तुम लोग क्यों नाहक आपस में झगड़ते हो! इसमें तो न कोई औरत है, न किसी के पिताजी! इसमें तो वह बूढ़ा है जिसे मैंने पिछले साल फाँसी का हुक्म सुनाया था।" यह कह कर उसने वह आइने का टुकड़ा अपनी जेब में रख लिया और चलता बना। पति-पत्नी खुशी-खुशी वहाँ से अपने घर लौट आए।

एक राजा था। उसको गाने बजाने का बड़ा शौक था। उसके दरबार में बड़े-बड़े गवैये और उस्ताद रहते थे। राजा उनको बड़ी-बड़ी तनख्वाहें देता था और रोज एक दो घण्टे उनसे संगीत सीखा करता था। लेकिन इस तरह बहुत कोशिश करने पर भी राजा को गाना बजाना न आया। राजा ने नए-नए उस्ताद बुलाए। तो भी कुछ फायदा न हुआ।

तब राजा ने निराश हो कर गाने की कोशिश छोड़ दी और सिर्फ बजाना सीखने लगा। तरह-तरह के बाजे मँगाए और साथ-साथ बजानेवाले भी। इस तरह फिर बहुत-सा रुपया खराब हुआ; लेकिन इसका भी कुछ फल न निकला। अब राजा बहुत उदास हो गया। उसने सोचा—"मैंने राज के इतने रुपए मिट्टी कर दिए। इतनी तकलीफ़ उठाई। राज-काज छोड़ कर गाने-बजाने के पीछे पड़ा रहा। लेकिन मैं सीख क्या पाया! कुछ भी नहीं। लोग जब यह सब जान जाएँगे तो क्या कहेंगे! क्या वे मेरी हँसी नहीं उड़ाएँगे!"

इस फ़िक्र में राजा का खाना-पीना भी भूल गया। उसे रात-दिन सोते-जागते एक ही सोच लगा रहा कि वह गाना-बजाना क्यों कर सीख सकेगा!

एक रात को जब राजा यही सब सोचते-सोचते सो गया तो उसे सपने में एक देवी दीख पड़ी और उसने कहा—"राजा! मैं जानती हूँ कि तुम्हें कौन-सी चिन्ता सता रही है। तुम्हारा हाल देख कर मेरा मन पिघल गया है। इसलिए मैं तुम्हारी मदद करने आई हूँ। देखो, मैं तुम्हें एक जादू की

कुमारी मणिमाला

बयोलिन देती हूँ। इसको बजाने में तुम्हें कुछ भी तकलीफ़ न होगी। बस, तारों पर कमान धर दो और आप ही आप यह बयोलिन बजने लगेगी और इसमें से ऐसी मनहर तानें निकलेंगी कि सुनने वालों पर मन्त्र-सा चल जाएगा। इस बयोलिन में और एक विशेषता भी है। जिसके सामने यह बजेगी वह आदमी बिना कुछ कहे सुने नाचने लगेगा और तब तक नाचता रहेगा जब तक बयोलिन का बजाना बन्द न हो जाए। लो यह बयोलिन, सुख से रहो। मैं जाती हूँ।" यह कह कर उस देवी ने वह बयोलिन राजा के सिरहाने रख दी और अदृश्य हो गई।

राजा चौंक कर उठा तो देखता क्या है कि सिरहाने बयोलिन रखी है। अचरज के साथ उसने उसे उठाया और बजाने लगा। उससे ऐसे मधुर गान निकलने लगे कि राजा को अपने कानों पर आप ही विश्वास न हुआ।

धीरे-धीरे राजा को सपने की सारी बातें याद आ गईं। देवी का आना, ढाढ़स बँधाना और जाते वक्त बयोलिन

सिरहाने रख देना, सब कुछ चित्र की तरह उसकी आँखों के आगे नाचने लगा। राजा को अपने सपने पर पूरा विश्वास हो गया। उसने पहरेदार को पुकारा। पहरेदार आकर उसके सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। राजा वॉयोलिन उठा कर बजाने लगा। बस, अब क्या था! पहरेदार राजा के सामने नाचने लग गया। राजा को बड़ी खुशी हुई। वह और भी जल्दी-जल्दी बजाने लगा। नौकर और भी तेजी के साथ नाचने लगा। आखिर नाचते-नाचते वह थक गया और उसके हाथ पैर दुखने लगे। वह रुकना चाहता था, लेकिन रुक न सकता था। बेचारा राजा से गिड़-गिड़ा कर कहने लगा—'महाराज! मालूम होता है किसी ने मुझ पर जादू कर दिया है। मेरे पैर दर्द कर रहे हैं। अगर थोड़ी देर और नाचता रहा तो मैं बेहोश होकर गिर जाऊँगा। कोई उपाय करके इस बला से मेरा पिंड छुड़ा दीजिए।' राजा को उस बेचारे पर दया आ गई और उसने वॉयोलिन बजाना बन्द कर दिया। नौकर लड़खड़ाता खड़ा हो गया। उसका सारा बदन पसीने से तर-बतर हो रहा था।

राजा को विश्वास हो गया कि अब कोई उसकी हँसी न उड़ा सकेगा। उसकी सारी उदासी दूर हो गई।

दूसरे दिन सवेरे दरबार में जाते वक्त अपने साथ वह जादू की वॉयोलिन भी ले गया। थोड़ी देर के बाद राजा ने दरबारियों को अपनी वॉयोलिन दिखाई और धीरे-धीरे उसे बजाने लगा। जैसे ही वॉयोलिन बजी, मन्त्री, सेनापति और सभी दरबारी उठ खड़े हुए और नाचने लग गए। राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। वह और भी ज़ोर-ज़ोर से बजाने लगा। दरबारी और भी तेजी से

नाचने लगे। कुछ ही देर में सब लोग चीखने लगे और गिड़-गिड़ा कर कहने लगे—"महाराज! और न बजाइए, नहीं तो हमारी जान निकल जाएगी!" तब कहीं जाकर राजा ने वयोलिन बजाना बंद किया और लोगों की जान में जान आई।

अब राजा के लिए यह एक खेल बन गया। वह रोज दरबार में वयोलिन ले आता और घण्टे दो घण्टे दरबारियों को नचा कर अपना मन बहलाता। नाच-नाच कर उन लोगों का थक जाना, हाय! हाय! करना, चीखना-चिल्लाना और गिड़-गिड़ाना देख कर हँसते-हँसते राजा का पेट फूल जाता और वह कहता—"वाह! अच्छा तमाशा है भई!"

एक दिन राजा दरबार में बैठा हुआ था और वह वयोलिन उसकी बगल में रखी हुई थी। थोड़ी देर बाद राजा ने बजाने के लिए वयोलिन ढूँढी तो मालूम हुआ कि वह गायब है। सब दरबारियों की तलाशी ली गई। लेकिन वयोलिन कहीं नहीं मिली। राजा आग-बबूला हो गया और कहने लगा—"अगर वयोलिन नहीं मिली तो सभी को फाँसी पर चढ़ा दूँगा।"

इतने में राजा की नज़र एक खम्भे के ऊपर पड़ी। उसने देखा कि वयोलिन एक बन्दर के हाथ में है और वह बन्दर खम्भे पर चढ़ा हुआ है। राजा बड़ा घबराया, लेकिन करता क्या! इतने में बन्दर वयोलिन बजाने लगा। बजाते ही राजा नाचने लगा। आश्चर्य तो यह था कि बाकी सभी दरबारी सुख से खड़े थे। बन्दर अब बड़ी तेज़ी से बजाने लगा। राजा दर्द के मारे चीखता-चिल्लाता नाच रहा था। आखिर वह थकावट के मारे बेहोश होकर गिर पड़ा। सभी दरबारी राजा के चारों ओर जमा हो गए और उसे होश में लाने की कोशिश करने लगे। थोड़ी देर के बाद राजा की आँखें खुलीं और उसने देखा कि बन्दर के बदले उसके सामने वही सपने वाली देवी खड़ी है और उसके हाथ में वही वयोलिन है। राजा का मुँह सफेद पड़ गया।

"मुँह बाये क्या देख रहे हो? महाराज! मैं वही देवी हूँ। तुम्हें अच्छी सीख मिल गई न?" देवी ने कहा।

"मैंने क्या कसूर किया है?" राजा ने पूछा।

"मैंने तुम पर तरस खाकर यह वयोलिन दी थी; लेकिन तुमने उसका उपयोग किया इन बेचारों को सताने में। अब समझ गए न कि इन बेचारों ने कितनी तकलीफ़ उठाई होगी?" देवी ने पूछा।

"सचमुच मैंने बड़ा भारी कसूर किया है। इस बार मुझे माफ़ कर दो, देवी! फिर कभी ऐसा न करूँगा। वह वयोलिन मुझे लौटा दो।" राजा ने गिड़-गिड़ा कर कहा।

देवी को राजा पर दया आ गई। उसने वयोलिन उस को लौटा दी और अन्तर्धान हो गई। राजा ने फिर कभी वयोलिन का दुरुपयोग नहीं किया।

सीता अपने माँ-बाप के साथ पड़ोस के एक गाँव में मेला देखने गई। उस रोज़ उस गाँव में बड़ा भारी उत्सव हो रहा था। लोग दूर दूर के गाँवों से बैल-गाड़ियों पर और पैदल भी चले आ रहे थे। रथोत्सव भी होने वाला था। अच्छी अच्छी भजन मंडलियाँ भी आ रही थीं। उस दिन वहाँ मवेशियों की हाट भी लगने वाली थी। इसलिए लोग अच्छे-अच्छे गाय-बैल हाँक कर ले आ रहे थे। सभी दूकानें तरह-तरह की खूबसूरत चीज़ों से सजी हुई थीं। जगह-जगह पर मिठाइयों की दूकानें थीं। उनमें से पकती हुई चीजों की सोंधी बास फैल कर लोगों को ललचा रही थी। थोड़ी ही दूर पर मैदान में एक डेरा लगा हुआ था और उसमें तमाशा हो रहा था। उसकी बगल में ही काठ के घोड़े झूल रहे थे।

सीता अपने माँ-बाप के साथ दिन भर वहाँ घूमती फिरती रही। उसने भजन सुने। तमाशे देखे। काठ के घोड़े पर चढ़ी। वह दिन भर आँखें फाड़-फाड़ कर मेला देखती रही। जब उसे भूख लगी तो उसकी माँ ने उसे मिठाई खरीद दी। भीड़ की धक्कमधुक्की में वह कहीं छूट न जाए, इस ख्याल से सीता की माँ उसका नन्हा-सा हाथ पकड़ कर अपने साथ घुमाती रही।

इसी तरह शाम हो गई। लेकिन कहीं अँधेरा न था। गैस और बिजली की बत्तियों से दिन का सा उजेला हो रहा था। भीड़ पल-पल में बढ़ती जाती थी। सीता अपनी माता का हाथ पकड़ कर उस भीड़ में सकपकाई सी घूम रही थी। एक जगह रामायण-गान हो रहा था। सीता बड़े अचरज के साथ यह सब देख रही थी। लेकिन आखिर थी तो वह छोटी लड़की ही। इस तरह कब तक घूमती रहती! बेचारी थक गई। उसे बड़े ज़ोर की नींद आने लगी। माँ ने जब यह देखा तो उसने

प्रेमशङ्कर चौबे

उसे एक जगह लिटा दिया और खुद उसकी बगल में बैठ गई। उस हो-हल्ले में भी आँख मूँदते ही सीता सो गई। बेचारी थकी हुई थी न! उसकी माँ उसे देखती बैठी रही।

इस तरह दो-तीन घंटे बीत गए। दो तीन औरतें बच्चों के साथ वहाँ आ पहुँचीं। इतने में सीता के पिता ने आकर उसकी माँ से कहा—"चलो, यहीं थोड़ी दूर पर भजन हो रहा है। थोड़ी देर तक सुन कर फिर लौट आयेंगे!"

'लड़की को छोड़ कर कैसे आऊँ!' सीता की माँ ने पूछा।

"हम उसको देखती रहेंगी। तुम जल्दी लौट आना!" बगल की औरतों ने कहा।

सीता की माँ ने सोचा—'जब तक यह जगती है तब तक मैं लौट आऊँगी।' यह सोच कर वह भजन सुनने चली गई।

आधा घंटा बीत गया। जिन औरतों ने सीता को देखते रहने का वादा किया था उन्हें भी नींद आ गई। वे वहीं लेट गईं और थोड़ी ही देर में नाक बजाने लग गईं।

इतने में सीता जगी और माँ को चारों ओर ढूँढने लगी। लेकिन उसकी माँ वहाँ कहाँ थी! इतने में थोड़ी दूर पर उसे एक औरत दिखाई दी जो देखने में ठीक उसकी माँ जैसी थी। सीता 'अम्मा' 'अम्मा' चिल्लाती हुई उसकी ओर दौड़ी। पर वह औरत तब तक भीड़ में ओझल हो चुकी थी। अब सबसे धक्का खाती हुई सीता हर औरत के पास जाती और देखती कि कहीं उसकी माँ तो नहीं है! कुछ औरतों को तो देख कर उसने समझा कि सचमुच उसकी माँ ही है। उसने उनका हाथ भी पकड़ लिया। लेकिन हर बार उसे निराश ही होना पड़ा। रेशमी साड़ियाँ पहने परियों जैसी औरतें वहाँ घूम रही थीं। एक से बढ़ कर एक खूबसूरत और

मची-धजी। पर किसी को देखने से उसे खुशी नहीं हुई।

इतने में धीरे धीरे सवेरा हो चला। सीता भटकते भटकते एक घर के सामने चबूतरे पर बैठ गई और सिसक-सिसक कर रोने लगी। इतने में एक बूढ़ा उस घर का दरवाजा खोल कर बाहर आया और अकेली बैठ कर रोती हुई सीता को देखा।

"बच्ची! तू कौन है? यहाँ किस लिए अकेली बैठी रो रही है?" बूढ़े ने पूछा।

"मैं अपनी माँ को ढूँढ रही हूँ। वह कहीं दिखाई नहीं देती।" सीता ने जवाब दिया।

"तुम्हारी माँ का क्या नाम है? वह कैसी साड़ी पहने है? देखने में कैसी है?" बूढ़े ने पूछा।

"मेरी माँ देखने में बहुत अच्छी लगती है। वह बहुत सुंदर है।" सीता ने कहा।

फिर बूढ़े ने बहुत से प्रश्न पूछे जिससे वह उसकी माँ का हुलिया जान कर पता लगा सके। लेकिन सीता ने सिर्फ 'मेरी माँ बहुत सुन्दर है। न जाने, कहाँ छूट गई' कहने के सिवा और कोई जवाब न दिया। इतने में आस-पास के बहुत से लोग

जमा हो गए। सभी के घर मेला देखने के लिए रिश्तेदार आए हुए थे। उन सब के घर में सुंदर स्त्रियाँ थीं। बूढ़े ने सोचा, शायद उन्हीं में से किसी की बच्ची होगी। इसलिए वह सीता को साथ लेकर एक एक घर में गया और उन सब औरतों को दिखा कर सीता से पूछा—'देखो, इनमें से तो कोई तुम्हारी माँ नहीं है?' लेकिन सीता उनमें से किसी को पहचानती न थी। उसने कहा—मेरी माँ और भी सुंदर है। 'न जाने, देखने में वह कैसी परी सी लगती होगी!' बूढ़े ने सोचा। वह अब सीता को गोद में

ले मेले में चला। वहाँ वह हर खूबसूरत औरत के पास जाता और सीता को दिखाता। लेकिन हर बार सीता कहती—"नहीं, यह मेरी माँ नहीं है। मेरी माँ और भी सुंदर है। आखिर घूमते घूमते बूढ़े का मन उकता गया। वह सीता को लेकर घर लौट आया। फिर उसने उसे नहा-धुला कर खिला-पिला दिया। खाना खाने के बाद सीता फिर चबूतरे पर आकर बैठ गई। उसकी आँखें माँ को देखने के लिए बेचैन थीं। वह वहीं बैठ कर माँ की राह देखने लगी।

साँझ हो गई। मेला देखने वाले धीरे-धीरे घर लौटने लगे। सीता चबूतरे पर बैठी बैठी हर राह चलती औरत को देख कर चौंक उठती कि शायद उसकी माँ ही है। उसके पास ही वह बूढ़ा और दस-पांच आदमी बैठे हुए थे। वे परेशान थे कि इस लड़की को कैसे उसकी माँ से मिलाया जाए।

अचानक सीता जोर से 'अम्मा' कह कर चिल्लाती हुई भीड़ में दौड़ी। वह एक औरत के पास जाकर पैरों से लिपट गई। उस औरत ने सीता को उठा कर गले से लगा लिया और दुलारने लगी।

सब लोग अचरज के मारे जहाँ के तहाँ रह गए। उन्हें मालूम हो गया कि वही सीता की माँ है। उन्होंने सीता की माँ को एक परी समझ रखा था। लेकिन वह औरत देखने में बड़ी कुरूप थी। दुहरा बदन, रूखी त्वचा, काला-कलूटा रंग, तिस पर चेचक के दाग! वाह! कैसी सुंदरता है!

पर धीरे धीरे वे समझ गए कि सीता ने सच ही कहा था। उसकी नजर में उसकी माँ सचमुच बड़ी सुन्दर थी। तुम्हीं बताओ, बच्चो! क्या तुमको अपनी माँ देखने में सबसे सुंदर नहीं लगती?

किसी जमाने में एक ब्राह्मण रहता था। उसके घर में उसकी माँ, बहू और उसकी सास भी रहती थीं। लेकिन उसकी माँ और बहू में बिलकुल नहीं बनती थी। वे एक दूसरे की सूरत देखते ही भड़क उठती थीं। एक दिन शाम को ब्राह्मण ज्यों ही घर लौटा तो उसकी बहू ने कहा—"अब मैं इस घर में एक घड़ी भी नहीं रह सकती। तुम अपनी माँ को तुरंत घर से बाहर निकाल दो। नहीं तो मैं किसी कुएँ में कूद पड़ूँगी।" यह सुन कर ब्राह्मण के होश-हवास उड़ गए। उसने सोचा—अगर उसकी स्त्री डूब कर मर गई तो सब लोग उसे बुरा-भला कहेंगे। इसलिए उसने बिना चूँ-चपड़ किए स्त्री की बात मान ली। उसी रात उसने अपनी माँ को बुला कर कहा—"माँ! आज मुझे मालूम हुआ है कि बहिन की तबीयत कुछ खराब है। अच्छा हो, अगर तुम जाकर उसे देख आओ।" माँ ने कहा—"जरूर बेटा! कल सबेरे ही मुझे उसके गाँव पहुँचा दो। नजदीक ही तो है!" मुँह अँधेरे ही माँ और बेटा चल पड़े। बेटा माँ को जंगल की राह से ले गया। बीच जंगल में आकर उसने किसी बहाने माँ को आगे-आगे चलने के लिए कहा। जब उसकी माँ कुछ दूर आगे बढ़ गई तो बेटा चुपके से घर भाग आया।

उसकी माँ ने समझा कि वह पीछे-पीछे आ रहा है। पर थोड़ी दूर जाने के बाद उसने पीछे मुड़ कर देखा तो बेटे का कहीं पता न था। वह रोती-कलपती एक पेड़ के नीचे बैठ गई। थोड़ी देर बाद ग्रीष्म-ऋतु एक स्त्री के रूप में टहलते-टहलते वहाँ आई। उस बुढ़िया को देख कर उसने पूछा—"बूढ़ी-माँ! जरा मुझे यह तो बता कि मैं अच्छी हूँ या नहीं!" बूढ़ी-माँ ने जवाब दिया—"बिटिया! तुमसे बढ़कर अच्छी और कौन होगी!

श्रीकृष्ण गुप्त

तुम्हारे राज में लोग बड़े सुख से रहते हैं। हर जगह शादी-ब्याह की धूम रहती है। मीठे खरबूजे-तरबूजे मिलते हैं। आम कटहल मिलते हैं। तुम बहुत अच्छी हो बिटिया!" यह सुन कर गर्मी की ऋतु खुशी-खुशी चली गई। फिर वर्षा-ऋतु ने आकर वही सवाल पूछा तो बुढ़िया ने जवाब दिया—"बिटिया! तुम्हारी बुराई कौन कर सकता है! तुम्हारी कृपा से तो पानी बरसता है। अगर पानी न मिले तो हम सब प्यासे मर जायें। तुम्हारी कृपा से ही कुएँ, तालाब सभी पानी से भर जाते हैं। सब जगह हरियाली छा जाती है। तुम तो सब से अच्छी हो बिटिया!" यह सुन कर वर्षा ऋतु भी चली गई। फिर शिशिर-ऋतु ने आकर वही पूछा। "बेटी, तुम्हारे बारे में तो कुछ कहने की ज़रूरत ही नहीं। तुम्हारे राज में सभी लोग लम्बी तान कर सुख से सो जाते हैं। तुम्हारे राज में ही अमरूद खाने को मिलते हैं। तुम तो सबसे अच्छी हो बिटिया!" बुढ़िया ने कहा। उसके इतना कहते ही तीनों ऋतुएँ एक साथ उसके सामने आ खड़ी हुईं।

तीनों ने मिल कर उस बुढ़िया को वर दिया कि जब वह बातें करेगी तो उसके मुँह से हीरे झड़ेंगे और जब वह हँसेगी तो मोती बरसेंगे! यह वर देने के बाद तीनों ने पलक मारते में बुढ़िया को घर पहुँचा दिया।

थोड़ी देर बाद जब बुढ़िया के बेटा-पुतोहू बाहर आए तो उसको देख कर दंग रह गए। आखिर बहू ने कहा—"मांजी! आप इतनी जल्दी यहाँ कहाँ से आ गईं!" जब सास ने इस बात का जवाब दिया तो उसके मुँह से हीरे झरने लगे। यह देख बहू अचंभे में आ गई और नीचे बैठ कर, हीरे बटोरने लगी। यह देख कर सास को हँसी

आ गई और तब उसके मुंह से मोती बरसने लगे। उस दिन से बहू सास की खातिर करने लगी। फिर भी उसके मन में यह उलझन पैदा हो रही थी कि यही हीरे-मोती उसकी माँ के मुंह से क्यों नहीं झड़ते? आखिर उसने एक दिन अपने पति को बुला कर कहा—"आप कल मेरी माँ को भी जंगल में छोड़ आइए। वह भी हीरे-मोती का रहस्य मालूम कर आएगी!" पति-देव पत्नी की बात कैसे टालता! दूसरे दिन वह तड़के उठा और अपनी सास को साथ लेकर जंगल चला गया। बीच जंगल में पहुँच कर उसने अपनी माँ की तरह ही उसे भी वहीं छोड़ दिया और घर लौट आया। उसकी सास भी उसी पेड़ के नीचे बैठी रही।

थोड़ी देर बाद पहले की तरह ही ग्रीष्म-ऋतु ने आकर उससे पूछा—"बूढ़ी माँ! मैं गर्मी की ऋतु हूँ। बताओ तो मैं अच्छी हूँ या नहीं?" इस पर बुढ़िया ने जवाब दिया—"हाँ, हाँ, तुम्हारी अच्छाई तो मैं खूब जानती हूँ। तुम्हारी धूप सबको झुलसा देती है! तिस पर लू भी चलने लगती है। भाड़ में जाय तुम्हारी अच्छाई! कहीं पीने को पानी तक नहीं मिलता।" यह सुन कर गर्मी की ऋतु चली गई। फिर वर्षा ऋतु ने आकर यही सवाल किया। बुढ़िया ने जवाब दिया—"छि:! बरसात की मौसम भी कोई मौसम है? एक बार जब बदली छा जाती है तो फिर उससे पिंड नहीं छूटता। जहाँ देखो वहीं पानी और कीचड़! बार-बार दाँत पिसलते हैं। धूप में कपड़े तक नहीं

सूखने पाते। घर से बाहर निकलने तक की गुंजाइश नहीं!" यह सुन कर वर्षा-ऋतु भी चली गई।

थोड़ी देर बाद शिशिर-ऋतु ने आकर वही सवाल पूछा—"अच्छा बताओ, मेरे बारे में क्या कहती हो?" बुढ़िया ने जवाब दिया—"तुम कौन-सा मुँह लेकर सवाल करने आई हो! सर्दी के मारे तो सारा शरीर ठिठुर जाता है! दिन तो यों ही देखते-देखते बीत जाता है। लंबी रातें काटे नहीं कटतीं। खाँसते-खाँसते दम फूल जाता है। तिस पर पूछती हो कि मैं अच्छी हूँ या नहीं! जा, जा!" इतना कहते ही तीनों ऋतुएँ उसके सामने आ खड़ी हुईं। तीनों ने उस बुढ़िया को एक गधे का रूप दे दिया। फिर उसे मारते-पीटते दामाद के घर के दरवाजे तक पहुँचा दिया—"तुम्हारी जबान बड़ी खराब थी। अब खूब रेंकती रहो।" यह कह कर तीनों चली गईं।

बेचारे ब्राह्मण की बहू रात भर अपनी माँ की राह देखती रही। बेचारी ने सवेरे उठ कर जो घर का दरवाजा खोला तो एक गधा सामने दिखाई दिया। उस गधे ने रेंकते हुए अपना सारा हाल कह सुनाया। बेचारी बहू को अपनी माँ की हालत देख कर बड़ा दुख हुआ। लेकिन करती क्या? उसने सोचा—'मेरी माँ की जबान बड़ी तेज चलती थी। शायद यह उसी की सजा है।"

बच्चो! तुमने कहानी तो सुन ली? अब बोलो तो तुमने इससे क्या सीखा? तुमने क्या सीखा सो तो नहीं मालूम। लेकिन यह कहानी सुन कर मैंने यही सीखा था—कभी यह शिकायत नहीं करनी चाहिए कि 'मौसम खराब है। मेरा मन नहीं लगता।'

सीता फल और राम फल

बच्चो ! तुम लोगों ने शरीफा तो खाया ही होगा । इसको बहुत से लोग 'सीता-फल' भी कहते हैं । उसी तरह का एक राम-फल भी होता है । देखने में ऊपर से यह सीता-फल जैसा कोंईदार नहीं होता । थोड़ा-सा फरक रहता है । लेकिन फोड़ने पर यह अन्दर से ठीक उसी के जैसा रहता है । इसका स्वाद भी ठीक उसी के जैसा होता है । आओ, हम तुम्हें इन फलों के जन्म की कहानी सुनाएँ ।

श्री रामचन्द्रजी के राज-तिलक के समय दूर-दूर के देशों से बहुत से सामंत-सरदार बंधु-बांधव, दोस्त-मित्र, और भक्त-प्रेमी आए । वे लोग राजा राम को भेंट देने के लिए अपने साथ कुछ-न-कुछ लेते आए । बन्दरों के राजा सुग्रीव, राक्षसों के राजा विभीषण, देवताओं के राजा इन्द्र, सभी लोग भेंट देने के लिए अपने साथ बेशकीमत मोती और हीरे-जवाहर ले आए थे । बड़े-बड़े ज्ञानी और भक्त लोग भी अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ-न-कुछ लेते ही आए ।

लेकिन हनुमान जी को न सूझा कि वे अपने स्वामी को क्या भेंट करें ! वे कोई निश्चय न कर सके । उन्होंने सोचा—"मैं कोई ऐसी चीज़ भेंट करूँ जो रामचन्द्रजी को बहुत प्यारी हो और जो चीज़ कोई न ला सका हो ।" लेकिन दुनिया भर के लोग आते आते दुनिया भर की चीज़ें ले आए थे । हनुमान जी चक्कर में पड़ गए कि अब वे कौन सी चीज़ लाकर राम की भेंट करें । कल ही तिलक होने वाला था । हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से काम नहीं चलने का । सहसा हनुमान जी को एक उपाय सूझ गया । बस, वे कमर कस कर तैयार हो गए और आसमान में उड़ते हुए सीधे ब्रह्म-लोक पहुँच कर, ब्रह्माजी के पास जा खड़े हो गए । हनुमानजी को इस

[illegible]कुमारी

तरह असमय में आया देख कर ब्रह्माजी घबरा गए। वे सोचने लगे कि आज न जाने कौन सी आफत सिर पर आने वाली है। उन्होंने उठ कर हनुमान जी की खातिर की और एक अच्छा सा आसन देकर बैठने के लिए कहा। लेकिन नहीं, हनुमानजी खड़े-खड़े बातें करने लगे—"मैं एक जरूरी काम से आया हूं। कल रामचन्द्रजी का राज-तिलक होने वाला है। इस शुभ अवसर पर सीता-राम की भेंट करने के लिए मुझे दो ऐसी चीज़ें चाहिए जिन्हें देखते ही वे खुश हो जाएं। जब तक आप ऐसी दो वस्तुएं रच कर मेरे हाथ में न दे देंगे तब तक मैं आप का पिंड नहीं छोड़ूंगा' हनुमान जी ने कहा। विधाता अच्छी तरह जानते थे कि हनुमान जी अपनी धुन के पक्के हैं। अपने हठ के लिए प्राणों तक की बाजी लगा देने वाले आदमी हैं। इसलिए उन्होंने अपना पिंड छुड़ाने के लिए दो ऐसे फल बनाए जो अब तक उनकी सृष्टि में नहीं थे। उन्होंने उनका नाम सीता-फल और राम-फल रखा। फिर उन्होंने वे दोनों फल हनुमान जी के हाथ में रख कर कहा—'जाओ! इन्हें ले जाकर रामचन्द्रजी की भेंट करो। वे तुम पर बहुत खुश होंगे।' हनुमान जी वे दोनों फल लेकर तुरंत वहां से लौट पड़े।

राज-तिलक का समय आया। पर हनुमान जी का कहीं पता न था। श्री रामचन्द्रजी

सोच में पड़ गए। उन्हें हनुमान जी से जितना प्रेम था उतना और किसी से न था। जब हनुमान जी न दीख पड़े तो उनके आनन्द पर पाला पड़ गया। उन्होंने सोचा—"शायद हनुमान किसी कारण रूठ कर कहीं छिप रहा है।"

इसी समय दरबार में खलबली मची और शोर हुआ—'हनुमान जी आ गए! हनुमान जी आ गए!' हनुमान जी भीड़ को चीरते तीर की तरह आगे बढ़े और रामचन्द्र जी के पैर छूकर दोनों फल उनके सामने रख कर बोले—'स्वामी! मैं आपके लिए ये दो फल लाया हूँ। इनमें एक का नाम है सीता-फल और दूसरे का राम-फल।' रामचन्द्र जी ने हनुमान जी को उठा कर गले लगाया और पूछा—'ऐसे फल तो हमने अब तक नहीं देखे थे। बताओ, तुम कहाँ गए थे और कहाँ से ये फल लाए हो!' हनुमान जी ने सारा हाल कह सुनाया।

सुन कर रामचन्द्र के साथ सभी लोग दाँतों तले उँगली दबाने लगे। उन्होंने कहा—'हनुमान जी जैसा भक्त और धुन का पक्का आदमी कहीं नहीं मिल सकता।' रामचन्द्र जी ने वे दोनों फल तोड़ कर सारी सभा में बाँट दिया। लोग उन फलों को चख कर कहने लगे कि ऐसे मीठे फल उन्होंने कभी नहीं खाए थे। राम और सीता बहुत प्रसन्न हुए। लोगों ने हनुमान की यादगार में उन फलों के बीज ले जाकर बगीचों में लगा दिए, जिनसे पौधे उगे, बड़े हुए और फूले-फले।

लोग उस दिन से आज तक बड़े प्रेम से सीता-फल और राम-फल खाते आए हैं। उन फलों में हनुमान जी की स्वामि-भक्ति की मिठास भरी हुई है।

बच्चो! ये फल खाते वक्त क्या तुमने कभी हनुमानजी को याद किया है! अगर नहीं किया है तो आगे से जरूर करना।

सैकड़ों बरस पहले किसी गाँव में एक जमींदार रहता था। वह बड़ा धनी आदमी था। उसके पास हजारों बीघे जमीन थी। लेकिन वह बड़ा कंजूस और मक्खीचूस था। उसके नौकर-चाकरों को भरपेट खाना तक नसीब न होता था। भला ऐसे कंजूस के पास कौन नौकरी करता! अगर कोई भूला भटका बेवकूफ आ भी जाता तो दस-पन्द्रह दिन में ऐसा चम्पत हो जाता कि किसी को कानों-कान खबर तक न होती। फिर जमींदार के हजार बीघों की खेती कौन करता! यों उसके हजारों बीघों में घास-फूस उग आयी और गाँव के गाय-बैल उसमें मजेसे चरने लगे।

संयोग से एक दिन एक साधू उस जमींदार के घर आया। जमींदार ने उस साधू से अपना दुखड़ा रोकर कह सुनाया। सुन कर साधू को उस पर दया आई और उसने जमींदार को एक मन्त्र बता दिया।

साधू के चले जाने के बाद जमींदार ने एक आसन पर बैठ कर उस मन्त्र का जाप किया। पलक मारते में उसके सामने एक राक्षस आ खड़ा हुआ और कहने लगा—"बोलो क्या चाहते हो!" जमींदार पहले तो डर गया, पर किसी तरह बोला—'अच्छा, क्या तुम मेरा कुछ काम कर दोगे!"

"जरूर कर दूँगा।" राक्षस ने कहा।

"पर तुम्हें मुफ्त में करना होगा। मैं पहले ही कह देताहूँ।" उस कंजूस ने कहा।

'कोई परवाह नहीं।' राक्षस ने कहा।

जमींदार बड़ा खुश हुआ कि मुफ्त में नौकर मिला। उसने हुक्म दिया—'तुरंत मेरे हजारों बीघे जमीन जोत आओ।' यह हुकुम देकर वह खाना खाने गया। इतने में राक्षस ने आकर कहा—'जमीन जोत आया।'

'क्या! सारा खेत जोत लिया! हजारों बीघे!' जमींदार ने पूछा।

हृषीकेश सिंह

'हाँ, सारा खेत जोत आया।' राक्षस ने कहा। जमींदार मन ही मन डर गया। पर मुँह पर बनावटी गुस्सा लाकर बोला—"तुमने खेत जोतने में इतनी देर क्यों लगाई?"

'माफ कीजिए। आगे से ऐसा न होगा।' राक्षस ने कहा।

'अच्छा, जाओ। जल्दी से खेत सींच कर निरा देना।' जमींदार ने कहा।

जमींदार खाना खाने के लिए आसन पर बैठा ही था कि इतने में राक्षस लौट आया और बोला—'सिंचाई-निराई हो गई। अब बोलिए—मैं क्या करूँ!'

'नहीं, नहीं, एक बार निराने से कुछ न होगा। इस काली चिकनी मिट्टी को तीन तीन बार निराना पड़ता है।' जमींदार ने कहा।

जमींदार का खाना अभी पूरा भी नहीं हुआ था कि राक्षस फिर लौट आया और बोला—'तुमने जो कहा था सो तो पूरा हो गया। कहो, अब क्या करूँ!'

जमींदार ने घबड़ाते हुए जल्दी-जल्दी कहा—'जाओ, सारे खेत को बो आओ। मैं अभी आकर देखता हूँ कि तुम सचमुच काम कर रहे हो या सिर्फ बातें बना रहे हो!'

जमींदार खाना खाकर कुल्ला कर ही रहा था कि राक्षस लौट आया और बोला—'बोना हो गया। अब क्या करूँ!'

'सचमुच बो आए हो? चलो मैं अभी तुम्हारे साथ चलता हूँ।' यह कह कर जमींदार उसके साथ चला। जाकर देखा तो सारा खेत बोया हुआ था। अब उसका दिल जोर से धड़कने लगा और हाथ पैर काँपने लगे। उसे न सूझा कि ऐसे नौकर को कैसा काम दिया जाय! उसने सिर खुजलाते हुए कहा—'अच्छा, देखो, सारे खेत में एक-एक पौधे की नई

भेड़ें चरा कर घर आ जाना। और देखो, भेड़ें चराने में इतनी जल्दी करने की कोई ज़रूरत नहीं।' यह कह कर वह बेतहाशा दौड़ता-दौड़ता घर जा पहुँचा और सीधे ज़मींदार ने जाकर पत्नी से बोला—'बोलो, अब क्या किया जाए! साल भर का काम राक्षस ने एक घण्टे में कर दिया। अब मैं उसे कोई काम न दे सकूँगा तो वह मुझे खा जाएगा। वह अभी आता ही होगा।' ज़मींदार ने रुआँसा हो कर कहा।

'कोई चिन्ता नहीं। जब वह आ जाए, तो एक बार मेरे पास भेज देना।' उसकी पत्नी ने लापरवाही के साथ कहा।

पाँच मिनट में राक्षस वापस आ गया। ज़मींदार ने उसे अपनी पत्नी के पास भेज दिया। ज़मींदार की पत्नी ने पहले तो राक्षस से घर का सारा काम करवा लिया। फिर अपने सिर का एक घुँघराला केश उसके हाथ में देकर कहा—'देखो, इसकी ऐंठ निकाल कर सीधा करके मेरे पास लाना।'

राक्षस वह केश लेकर सीधा करने के लिए बाड़ी में गया। लेकिन दिन बीत गए, हफ्ते बीत गए, तो भी वह केश सीधा न हुआ। ज़मींदार जो काम चाहता, राक्षस से करवा लेता और फ़ुरसत के वक्त वह केश राक्षस के हाथ दे देता। आखिर राक्षस भी ऊब गया और उस केश को सीधा करने का उपाय ढूँढते हुए गली-गली घूमने लगा। एक दिन उसने देखा कि एक लुहार लोहे की एक छड़ आग में गरम करके हथौड़े से सीधा कर रहा है। बस, अब क्या था! वह दौड़ा-दौड़ा एक अँगीठी के पास गया और वह केश आग में डाल दिया। केश जल कर साफ़ हो गया और उसके साथ-साथ राक्षस भी।

ऊपर देखो ! एक लड़की डर कर भाग रही है। जानते हो कि वह क्यों डर गई ! वह लड़की फूल चुनने के लिए उस पेड़ के नज़दीक गई थी। इतने में उसे आदमियों की चिल्लाहट और कुत्ते की 'भौं-भौं' आवाज़ सुनाई पड़ी। इसीलिए वह लड़की डर कर भागने लगी। ज़रा बताओ तो देखें कि वहाँ कितने आदमी और कितने कुत्ते छिपे हुए हैं ! अगर न बता सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

चन्दामामा

चन्दामामा ! आसमान में
चमक रहे हो क्यों प्यारे ?
दमक रहे हैं साथ तुम्हारे
छोटे बड़े सभी तारे ।

चन्दामामा ! रोज रात को
बोलो, क्यों उग आते हो ?
और सबेरा होते ही तुम
कहो, कहाँ छिप जाते हो ?

चन्दामामा ! डरते हो क्या
तुम भी भूतों - चोरों से ?
उस दिन देखा था पानी में
थरथर कँपते जोरों से ।

पाया कहाँ उजाला तुमने
जो हर रात चमकते हो ?
इतने तारे मिले कहाँ से
जिनके संग विचरते हो ?

आओ, चन्दामामा ! आओ,
मेरे घर में आ जाओ !
रक्खूँगा मैं बड़े प्रेम से,
दूध - मलाई नित खाओ ।

साथ खेलने को तारे हैं
'राम, हेम, गोपी-भैया !'
खेलेंगे सब आँख - मिचौनी,
नाचेंगे ता - ता - थैया ।

[अशोक, वि. ९.]

बच्चों की देख-भाल

आदमी को जिस तरह खुराक की जरूरत है उसी तरह कपड़ों की भी है। पिछली बार मैंने खुराक के बारे में बताया था। इस बार पोशाक के बारे में बताती हूँ, सुनो।

कपड़े पहनने से फ़ायदा यह है कि आदमी की देह शीत, घाम और वर्षा की ज्यादतियों से बच जाती है। बच्चों के लिए पोशाक बनवाते समय एक बात जरूर ध्यान में रखनी चाहिए। पोशाक खूब ढीली-ढाली रहे जिससे ठंडी हवा हमेशा बदन में लगती रहे और पसीना जल्दी-जल्दी सूख जाए। भारी, मोटी या चुस्त पोशाक पहनने से बच्चों की बढ़ती रुक जाती है। ऐसी पोशाक पहनने से खून के बेरोक-टोक बहने में बाधा पहुँचती है। कभी-कभी तो साँस लेने में भी दिक्कत हो जाती है।

बच्चे ज्यादातर पैजामे का फीता कस कर बाँध लेते हैं। इससे वहाँ की चमड़ी पर खरोंच लगती है और खुजली हो जाने का डर रहता है। इन बातों को ध्यान में रख कर ऐसी आदतें छुड़ा देनी चाहिए। अपना बड़प्पन दिखाने के लिए क़ीमती पोशाकें बनवाने में कोई फ़ायदा नहीं। आँखों में चकाचौंध पैदा करने वाले रंगीले-भड़कीले कपड़े पहनने से कोई फ़ायदा नहीं। पोशाक तो जहाँ तक हो सके सादी हो, ढीली और हल्के रंगों की हो। बच्चों के कपड़े हमेशा साफ़ रहें। साफ़ कपड़े पहनने वाले बच्चे हमेशा स्वस्थ रहते हैं।

तुम्हारी दीदी
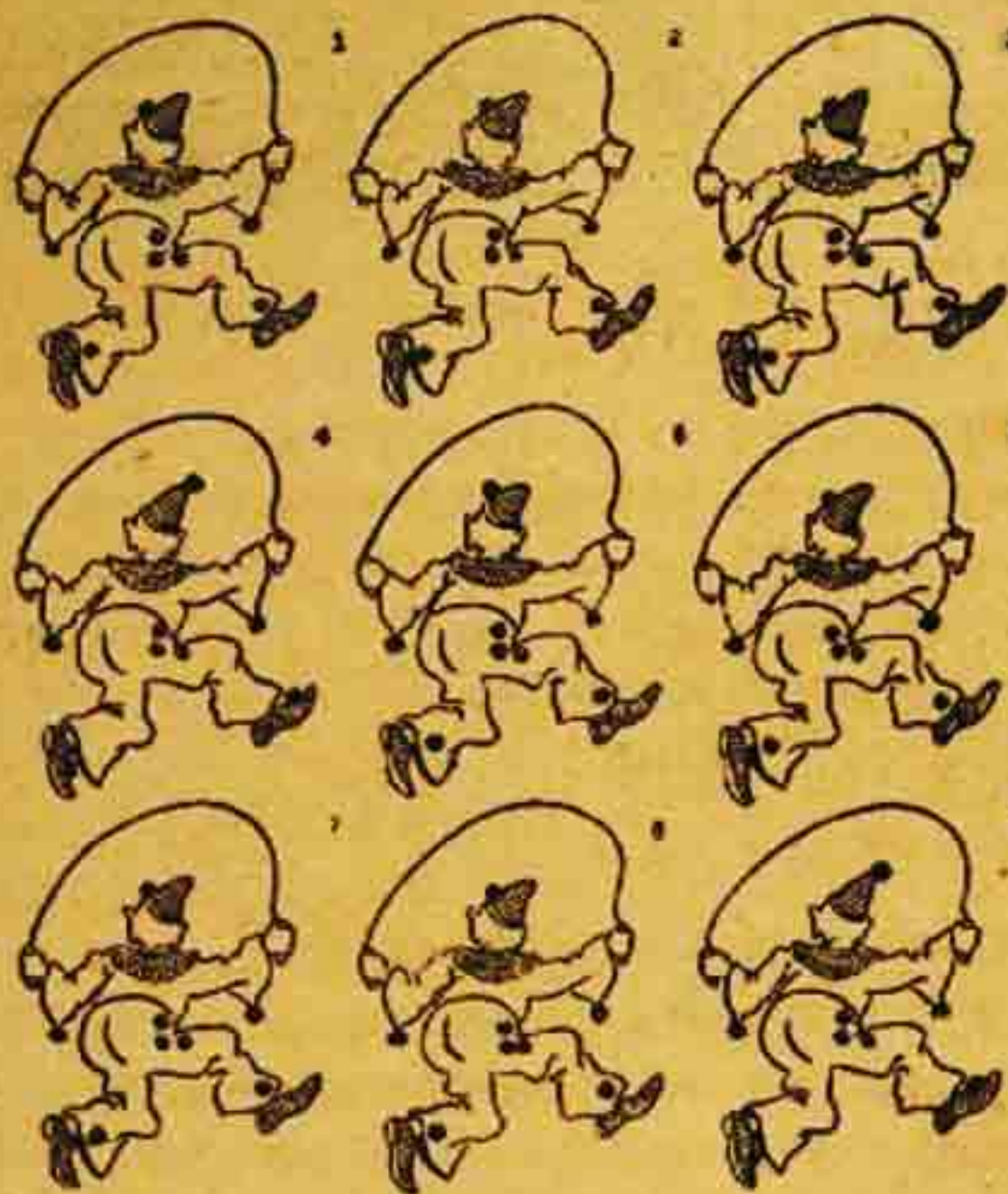
ऊपर नौ मसखरे दिखाई देते हैं। उनमें दो फर्क वाले हैं। जरा बताओ तो देखें, वे दोनों कौन से हैं? अगर न बता सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

ताश की पत्ती गुम कर देना।

यह हाथ की सफ़ाई का काम है। कई बार मैंने खुद कर दिखाया है। एक ताश की गड्डी ले लो। तमाशा-बीनों के सामने ही उसे मिला दो। फिर किसी से कह दो कि आगे आकर एक मनमानी पत्ती निकाल ले और निकाल कर वह पत्ती तुम्हें दिखाए बिना ही तुम्हारे रूमाल में छिपा दे। इतने में तुम्हारा नौकर एक गिलास में पानी ले आएगा। जैसे चित्र में दिखाया गया है ठीक उसी तरह गिलास रख कर रूमाल की पत्ती गिलास में छोड़ दो। फिर रूमाल झाड़ कर दिखा दो। गिलास वाली पत्ती गिलास में ही गायब हो जाएगी। होशियार से होशियार दर्शक भी पकड़ न पाएगा कि पत्ती क्या हो गई!

वह काम इस तरह करना चाहिए। पहले सेल्यूलाइड की बनी हुई एक नकली ताश की पत्ती अपने कोट की आस्तीन की तह में छिपा कर रख लो। फिर जब दर्शक की चुनी हुई पत्ती गिलास में गिरा देने का समय आएगा तो वह पत्ती चालाकी के साथ कोट की आस्तीन में छिपा लो और उसके

पहले यह नकली पत्ती गिलास में डाल दो। दूसरा चित्र देखो तो इसका रहस्य तुम्हारी समझ में आ जाएगा। अब तुम समझ गए न ! तुम गिलास में नकली पत्ती डाल रहे हो। दर्शक की चुनी हुई पत्ती नहीं। लोग तो यह जानते नहीं कि तुम्हारे पास एक नकली पत्ती भी है। इसलिए वे समझेंगे कि तुमने असली पत्ती ही गिलास में गिरा दी है। सेल्लूलाइड की पत्ती तो बिल्कुल सफेद होगी ! इसलिए पानी में उसे कोई नहीं देख सकेगा। लोग समझेंगे कि गिलास के पानी में कुछ नहीं है।

यह काम खतम होते ही बाजीगर नकली पत्ती गिलास से निकाल ले। जब लोग तालियाँ बजाने लगेंगे तो उस खुशी में इस नकली पत्ती की बात नहीं भूलनी चाहिए। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है। सेल्यूलाइड की पत्ती बिल्कुल सफेद होती है। वह पानी में आसानी से नहीं देखी जा सकती। इसलिए हम उसकी बात ही भूल जाते हैं।

ढाके में एक बार ऐसा ही हुआ। मैं नकली पत्ती गिलास से निकाल लेना भूल गया। सवेरे मेरा नौकर काम करने आया तो उसकी नजर उस गिलास पर पड़ी। वह चकित हो कर वह गिलास मुझे दिखाने आया। "बाबूजी ! देखिए तो, इस गिलास में यह क्या है ?" उसने कहा। बस, अब क्या था ! मेरी सारी कलई खुल गई।

* * *

[अगर कोई इस के सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार करना चाहें तो सीधे प्रोफेसर साहब को लिखें। प्रोफेसर साहब खुद उन के सारे सन्देह दूर करेंगे। हाँ, प्रोफेसर साहब को पत्र अंग्रेजी में ही लिखा जाए। यह ध्यान में रहे। प्रोफेसर साहब का पता :—

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मेजीशियन

पो. बा. ७८७८ कलकत्ता १२.]

ऊपर देखो—उस वृत्त के बीचों-बीच एक सुन्दर शिशु लेटा हुआ है। चारों कोनों में से वे चारों उस शिशु के पास पहुँचना चाहते हैं। लेकिन कोई एक ही पहुँच सकता है। बताओ तो देखें, वह कौन है!

कमिला देवी

कुमारी हेमा
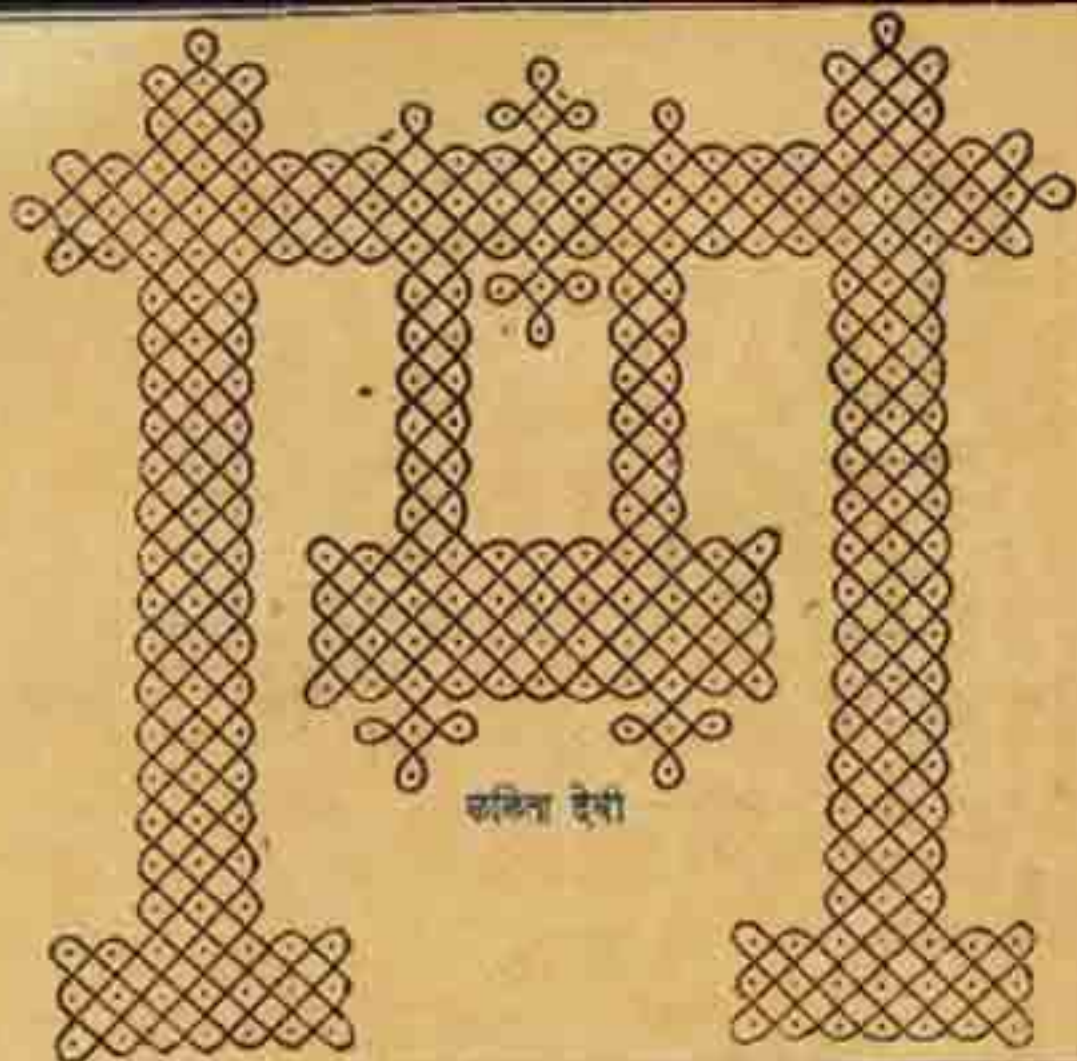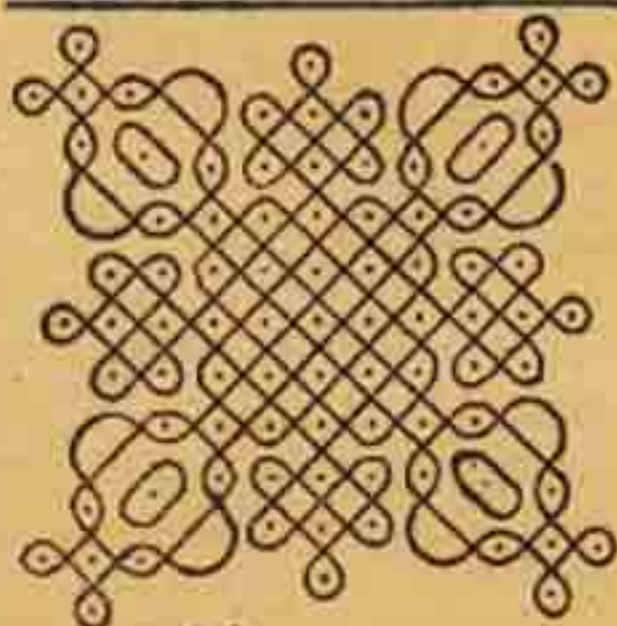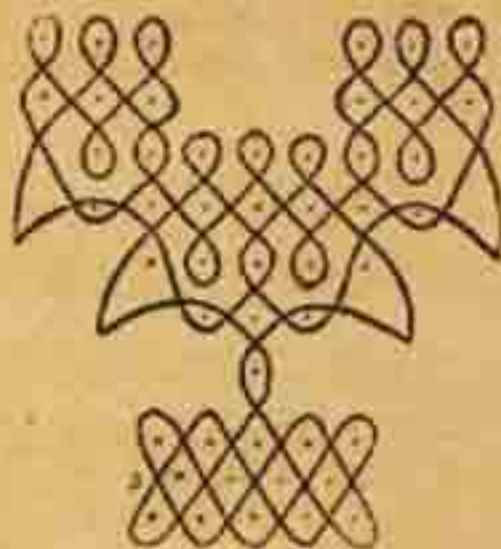
अहल्याबाई
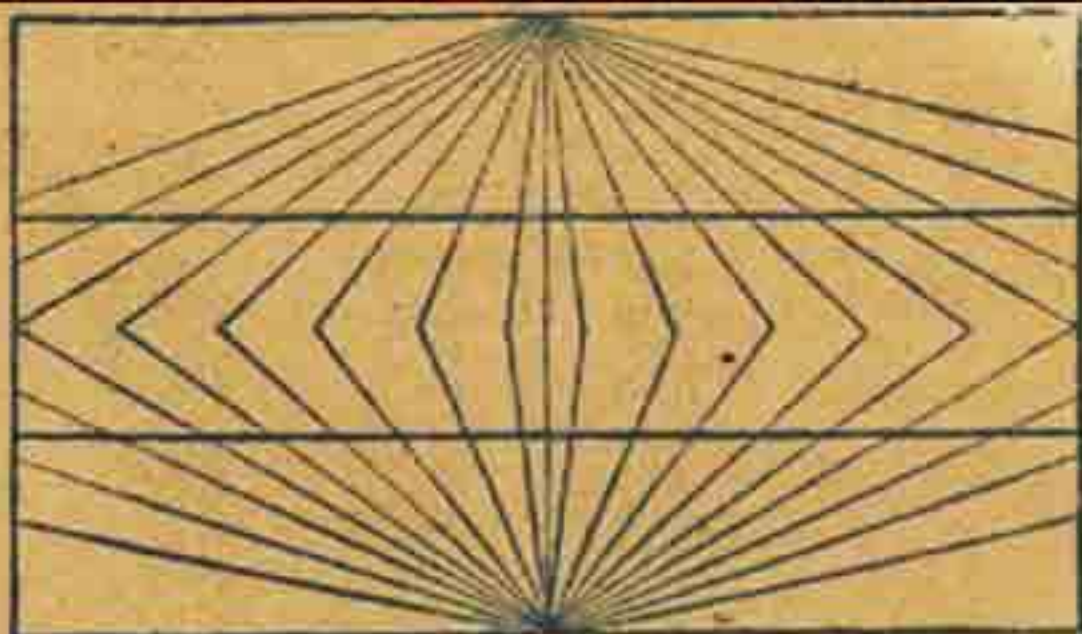
बच्चो! ऊपर देखो—इस चित्र में दो समानांतर रेखाएँ हैं। ज़रा बताओ तो देखें, ये टेढ़ी हैं या नहीं?
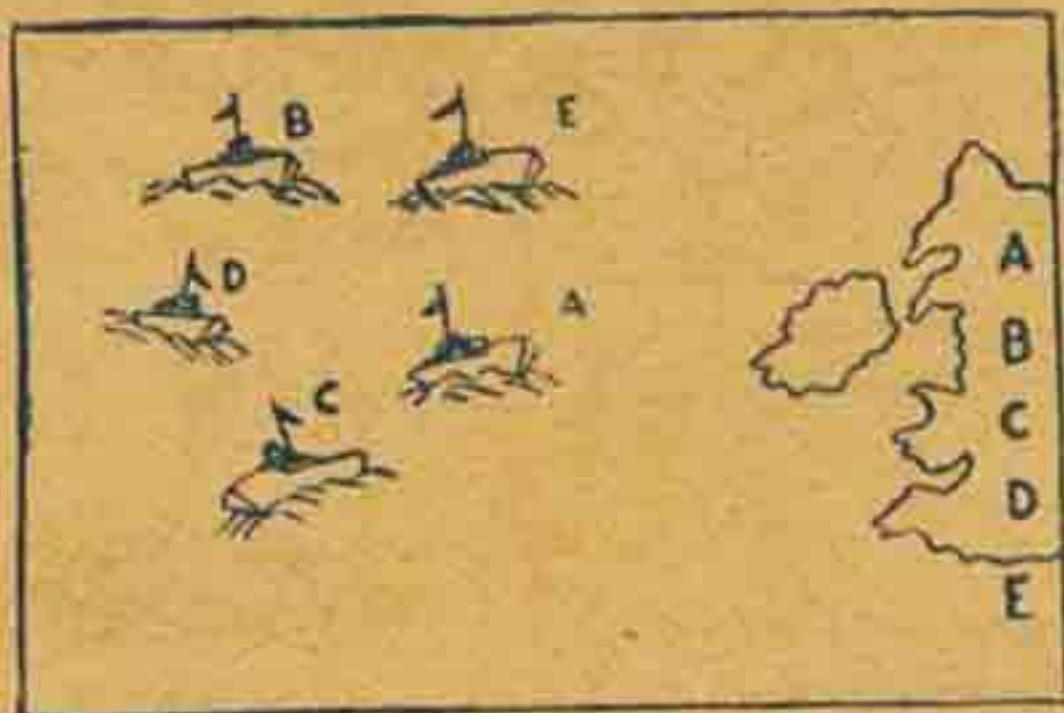
ऊपर A B C D E नाम के पाँच जहाज़ हैं। इन पाँचों जहाज़ों को बगल में दिये हुए उन्हीं नामों के पाँच बन्दरगाहों में पहुँचाना है। लेकिन देखो, हर जहाज़ की राह अलग हो। कोई जहाज़ दूसरे की राह में न आने पाए। ज़रा इन जहाज़ों को पेन्सिल की लकीर खींच कर बन्दरगाहों में पहुँचाओ तो देखें? अगर तुम से यह न हो सके तो '५८-वाँ पृष्ठ देखो।

गुप्त चित्र

ये महाशय एक रियासत के मन्त्री हैं। वे दरबार में जाना चाहते हैं। इसलिए अपने हाथी की राह देख रहे हैं। लेकिन न जाने वह कहाँ गुम हो गया? वह कोई छोटी-मोटी चीज़ भी नहीं है जो नजर से बच जाय। अगर आपको वह हाथी कहीं दिखाई पड़े तो जाकर बेचारे मन्त्री जी को बता दीजियेगा न? अगर आपको उस हाथी का पता न लगे तो ५९-वाँ पृष्ठ देखिए।

क्या आप जानते हैं?

जिराफ़ की गर्दन इतनी लंबी क्यों होती है और वह क्या खाती है?

क्या साँप के कान हैं?

*

अगर आप न जानते हों तो ५९-वाँ पृष्ठ देखिए।

संकेत

बायें से दायें

२. गान्धीजी का प्यारा नाम

४. शरीर पर का काला बिन्दु

५. शब्द

८. बहुत

९. लज्जा

१२. मर्यादा

१३. रनवास

ऊपर से नीचे

१. आदर

२. पूजा करने लायक

५. आसमान

६. बन्दर

७. पैमाइश

१०. प्रमाण-पत्र

११. दरवाजा

1 सा				2	3	जी
4						
		5	6	7		
		8	न			
		9				10
	11				12	
13 ह						द
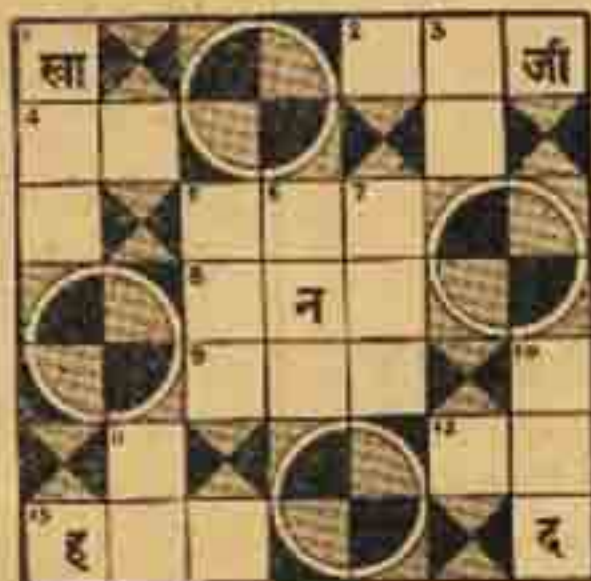
'क्या आप जानते हैं ?' का जवाब :

जिराफ़ी रेगिस्तान में रहता है। वहाँ हरी हरी घास नहीं होती। उसे पेड़ों के पत्ते खाकर जीना पड़ता है। इसीलिए उसकी गर्दन बढ़ बढ़ कर लम्बी हो गई है।

साँप के कान नहीं हैं। वह अपनी चमड़ी से सुनता है।

पिछली बार तुम ने अजगरों को रंग दिया होगा। इस बार सोचो कि हिरनी को किन रंगों से रंगना चाहिए। इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उसका मिलान करके देख लेना।

Chandamama, November, '49 — Photo by B. Ranganatham

मन्दिर में दीवाली !

सुन्दर अजगर